Golden Research Thoughts ISSN 2231-5063
Volume-3, Issue-1, July-2013

तार सप्तक और गिरिजाकुमार माथुर की कविताएँ

नीता सिंग
हिन्दी विभागाध्यक्ष श्री बिंझाणी नगर महाविद्यालय, उमरेड रोड, नागपुर

सारांश : *कवि का वक्तव्य :–*

श्री गिरिजाकुमार माथुर विषय से अधिक टेकनीक को महत्व देते हैं। वे चित्र को अधिक स्पष्ट करने के लिए वातावरण के रंग भरते हैं। कहीं–कहीं तो वातावरण के चित्रण से ही विषय रंगित करते हैं। प्रत्येक कविता में प्रथम उसकी आधार–भूमि निर्माण करना आवश्यक समझते हैं। उन्हीं के शब्दो में वातावरण के चित्रण के 'डिटेल' (Detail) में मैंने रंगों का आधार विशेष रूप से रखा है। किन्तु मैं चित्र को सदा हल्के रंगों की छाँहों के आवरण में लिपटा पसन्द करता हूँ। क्योंकि यथार्थ चित्र के सभी डिटेल मैं कला की दूरी से देखता रहा हूँ। मेरा यह विश्वास है कि अत्याधिक गहरे रंगों का प्रयोग कला में प्राचीनता ;डमकपंमअंस थ्जनपजद्ध का द्योतक है। क्लासीकल विषयों पर गम्भीर शैली (Grand Style) में लिखी कविताओं में मैंने गहरे रंग प्राचीनता लाने के लिये रक्खे हैं। यहाँ मैंने आधारभूमि विशालकाय कर दी है और डिटेल कम। डिटेल मैंने रोमानी कविताओं में ही अधिक भरे हैं। इसके अतिरिक्त मैं चित्रकला को तीन दूरियाँ (Three distance) चित्र के पूर्णत्व (Rounding up) के लिए यत्र–तत्र लाया हूँ।

प्रस्तावना

भाषा और व्यंजना श्री माथुर जी रोमानी कविता को हिंदुस्तानी के बोलचाल के छोटी और मीठी ध्वनि वाले शब्दों में लिखना पसन्द करते हैं। क्लासीकल कविताओं में आर्य गुण (Aryaniam) लाने के लिए बड़ी लम्बी और गम्भीर ध्वनि वाले शब्द रखते हैं। अभिव्यंजनात्मक या शब्द–विन्यास वातावरण के रूप–भाव के अनुकूल नये बनाते हैं।

छन्द तथा ध्वनि–विधान–श्री गिरिजाकुमारजी मुक्त छंद ही पसंद करते हैं। उन्होंने गम्भीरता से विचार कर मुक्त छंद के कुछ नियम बनाये हैं जिनमें काव्य की सहज स्वाभाविक भावाभिव्यक्ति के साथ व्यंगितात्मकता पर कवि ने ध्यान दिया है। उनके ये नियम विचारणीय हैं तथा भावी काव्य के लिए सुन्दर प्रयोग हैं। उन्हीं के शब्दों में – "मुक्त छंद का मैंने सम्पूर्ण विधान रचा है। मुक्त छंद को दो भागों में विभक्त किया है, वर्णिक और यांत्रिक तथा इनके रूपान्तर। वर्णिक में मैं कवित्त के विरामों को उनके रूपान्तर सहित लेकर चला हूँ। यह आवश्यक नहीं रक्खा कि कवित्त के विरामों को उनके रूपान्तर सहित लेकर चला हूँ यह आवश्यक नहीं रखा कि कवित्त के पूर्ण विरामों पर ही पंक्ति समाप्त हो, अपितु अर्थ, विराम भी शुध्द माने हैं जब तक वे अनुच्चरित वर्ण (Unaccented syllable) पर समाप्त न होकर उच्चरित (Accented) पर समाप्त होते हों। इस भाँति कवित्त के विरामों को लेकर कितने ही प्रकार की मुक्तछंद–पंक्तियाँ निर्मित की हैं। सवैये के विरामों पर स्थित एक नये प्रकार का बहुत संगीतमय मुक्तछंद लिखा है (आज हैं केसर रंग रंगे का)। एक कविता में एक प्रकार का मुक्त छंद प्रयुक्त होना आवश्यक समझता हूँ। यदि उच्चरित वर्ण–विन्यास (Syllable) से पंक्ति आरम्भ हुई तो समस्त पंक्तियाँ उच्चारित से ही प्रारम्भ होनी चाहिये। विरामांत पंक्तियों में यह नियम अनिवार्य कर दिया है। धारावाहिनी पंक्तियों में भी प्रथम पंक्ति का अर्धविराम द्वितीय पंक्ति में लेने का नियम रक्खा है। पंक्तियों के विरामों की ध्वनि–मात्राएं पूर्णतः सम एवं शुध्द होना अत्यंत आवश्यक समझता हूँ, इन नियमों के विरूध्द लिखा गया मुक्त छंद अशुध्द मानता हूँ।"

गिरिजाकुमाार माथुर की कविताएँ :–

'आज हैं केसर रंग रंगे वन' –

"आज हैं केसर रंग रंगें वन
रंजित शाम भी फागुन की खिली पीली कली–से
केसर के वसनों में छिपा तन
सोने की छाँह–सा
बोलती आँखों में
पहिले वसंत के फूल का रंग है।
गोरे कपोलों पे हौले से आ जाती
पहिले ही पहिले के
रंगीन चुम्बन की–सी ललाई।
आज हैं। केसर रंग रँगे
गृह, द्वार, नगर, वन
जिन के विभिन्न रंगों में है रंग गयी
पूनों की चन्दन चाँदनी।"[1]

यह कविता माथुर जी की आसक्ति का प्रधान केन्द्र है। यह कविता सामान्यतः आकर्षक होती हुयी भी सर्वत्र गहरे भावबोध से उद्‌भूत नहीं जान पड़ती। माथुर के कृतित्व में भावों का गद्दरपन विशेषरूप से आस्वाद्य है और यह भावात्मक गद्दरपन प्रकृति चित्रों से अधिक यौन आकर्षण पर आधारित है। पर इन वैयक्तिक चित्रों को उन्होंने कहीं इस प्रकार प्रस्तुत नहीं किया कि वे 'वल्गर' लगने लगे। गद्दरपन के प्रभाव को बढ़ाने के लिए उन्होनें लोक संस्कृति के बहुत से उपकरणों का प्रतीकों, उपमानों अथवा अभिप्रायों की भाँति प्रयोग किया है। इस प्रकार समीक्षक कवि माथुर की भाव–धारा में प्रणय भावना की प्रधानता प्रतिपादित करते हैं और समीक्षकों का एक वर्ग यदि उनकी प्रेमानुभूति को कुंठाजन्य मानता है तो दूसरा वर्ग कवि माथुर के प्रणय चित्रों को अश्लील नहीं समझता।

'रूककर जाती हुई रात' –

"रूककर जाती हुई रात का
अंतिम छाहों भरा प्रहर है,
श्वेत धुएँ के पतले नभ में
दूर झाँवरे पड़े हुए सोने से तारे
जगी हुई भारी पलकों से पहरा देते
नींद भरी मन्दी बयार चलती है
वर्षा–भीगा नगर
भोर के सपने देख रहा है अब भी
लम्बे–लम्बे धुँधले राजपथों में
निशि भर जली रोशनी की
कुछ थकी उदासी मँडराती है
पानी रँगे हुए बँगलों के वातायन से
थकी हुई रंगीनी में डूबा प्रकाश अब भी दिख जाता।
रेशम, पर्दों, सेजों, निद्रा भरे बंधनों की छाया–सा।"[2]

माथुर जी ने अपनी कविताओं में विस्तृत प्राकृतिक वातावरण प्रस्तुत करने की ओर विशेष रूचि प्रकट की है। उनकी कुछ कविताओं में अत्यधिक प्रभावशाली एवं ह्रदयस्पर्शी वातावरण की योजना हुयी है। कवि माथुर को कुछ कविताओं में प्रकृति का स्वतंत्र चित्रण करने में अप्रतिम सफलता भी प्राप्त हुई। उन्होंने प्रकृति को उसी रूप में अंकित किया है जैसी उसकी अनुभूति उन्हें हुई है। उपरोक्त कविता इसीका उदाहरण है।

'चूड़ी का टुकड़ा' – यद्यपि आधुनिक हिन्दी साहित्य की एक प्रमुख विशेषता वैयक्तिकता का अभिव्यक्तिकरण है और भारतेन्दु, द्विवेदी एवं छायावादी युग में भी वैयक्तिकता की प्रधानता रही है लेकिन प्रयोगवादी कवि तो विशेष रूप से आत्मनिष्ठ और आत्मकेन्द्रित जान पड़ते हैं। इस प्रकार प्रयोगवादी कवियों की काव्यसाधना अंतर्मुखी रही है और नितांत वैयक्तिक क्षणों में भोगे हुए जीवन की सूक्ष्म अनुभूतियाँ ही उनकी कविता के प्रधान विषय हैं। अतएव कवि माथुर ने भी अपनी उक्तियों में कहीं–कहीं वैयक्तिक भावनाओं को प्रधानता प्रदान की है ; जैसे –

"आज अचानक सूनी सी संध्या में
जब मैं यों ही मैले कपड़े देख रहा था,
किसी काम में जी बहलाने,
एक सिल्क के कुर्ते की सिलवट में लिपटा,

गिरा रेशमी चूड़ी का,
छोटा–सा टुकड़ा
उन गोरी कलाइयों में जो तुम पहिने थीं,
रंग भरी उस मिलन रात में ।
मैं वैसा वा वैसा ही
रह गया सोचता पिछली बातें।"[3]

'रेडियम की छाया' – प्रयोगवादी कवियों के प्रेम का स्वरूप मांसल ही और यौवन वर्जनाओं एवं कुंठित वासनाओं से पीड़ित होने के कारण उन्होंने सर्वत्र अथवा बहुधा काम प्रवृत्तियों को ही केन्द्रबिन्दु माना है। स्वयं अज्ञेय ने 'तार सप्तक' कि भूमिका में यह स्वीकार किया है कि, "आधुनिक युग का सामान्य व्यक्ति सेक्स संबंधी वर्जनाओं से आक्रान्त है। उसका मस्तिष्क दमन की गयी सेक्स की भावनाओं से पीड़ित है, इसी कारण न तो उसमें प्रेम का सामाजिक रूप ही है और न इसकी सूक्ष्म भावात्मकता है। उस पर मनोविश्लेषण विज्ञान का बहुत प्रभाव है। मनोविश्लेषण शास्त्र के प्रभाववश अचेतन की कुंठाओं का प्रकाशन उसका उद्देश्य है। वह अपनी दमित वासनाओं को जो बादल को देखकर उद्दीप्त हो उठती है अति यथार्थवादिता के कारण नग्न रूप में सामने रखता हुआ जरा भी संकोच नहीं करता।" इस प्रकार कवि माथुर की उक्तियों में भी कहीं–कहीं अति यथार्थवादिता के दर्शन होते हैं ; जैसे –

"उन्हीं रेडियम के अंकों की लघु छाया पर,
दो छाँहों का वह चुपचाप मिलन था,
उसी रेडियम की हल्की छाया में,
चुपके का वह रूका हुआ चुम्बन अंकित था –
कमरे की सारी छाहों के हल्के स्वर–सा
पड़ती थीं जो एक–दूसरे में मिलन गुँथकर
सूनी–सी उस आधी रात –"[4]
"कुतुब के खंडहर" –
"सेमल की गरमीली हल्की रूई समान
जाड़ो की धूप खिली नीले आसमान में
झाड़ी–झुरमुटों से उठे लम्बें मैदान में।'[5]

इस कविता में वातावरण का चित्रण ही प्रमुख रूप से किया गया हैं और इसमें कोई संदेह नहीं कि कवि द्वारा अंकित ऐसे दृश्य–जिनमें केवल वातावरण की प्रधानता है या जिनमें केवल वातावरण का ही चित्रण किया गया है – प्रभावशाली और हृदयस्पर्शी है।

'पानी भरे हुए बादल' – मूर्त पदार्थों के लिए अमूर्त उपमान की स्थापना कर प्रयोगवादी कवियों ने मूर्त के अमूर्त बिम्ब प्रस्तुत किए हैं। मूर्तता के अभाव में इस प्रकार के बिम्ब धूँधले एवं अस्पष्ट ही रहते हैं। माथुर जी के काव्य में ऐसे अनेको बिम्ब प्रस्तुत किए जा सकते हैं। एक उध्दरण देखिए है –

"कुचले हुए मरे मन–सा है मौन नगरी भी
मद्दूरों का दूरी से रूकता स्वर आता।"[6]

नगर चहल–पहल का प्रतीक है, लेकिन वह मौन है। उसकी मौनता को कवि ने कुचले हुए मरे मन से बिम्बित किया है। जैसे कुचले मन की गति रूक जाती है, वैसे ही नगर की भी गति रूक जाती है। हाँ, बिम्ब कुछ स्पष्ट नहीं हो पाता, क्योंकि "मरा मन" दृश्य पदार्थ नहीं है।

'क्वाँर की दुपहरी' – 'तार सप्तक' में कवि माथुर की कुछ कविताएँ ऐसी भी हैं जिनमें कवि ने प्रारंभिक पंक्तियों में कविता की आधारभूमि का निर्माण किया है। उदाहरण के लिए 'क्वाँर की दुपहरी' की इन प्रारंभिक पंक्तियों को उद्धृत किया जा सकता है :–

'क्वाँर की सूनी दुपहरी
श्वेत गरमीले, रूएँ–से बादलों में,
तेज़ सूरज निकलता, फिर डूब जाता।
घरों में सूनसान आलस ऊँघता है,
थकी राहें ठहर कर विश्राम करतीं,
दूर सूनी गली के उस छोर पर से
नीचे–नीचे खेलते कुछ बालकों की
मिली–सी आवाज़ आती।'[7]

घरों में सूनसान आलस के ऊँघने से, थकी राहों से, सूनी गली आदि के वर्णन से कवि ने दोपहरी से अत्यधिक ताप को बिम्बित किया हैं क्योंकि गर्मी से व्याकुल मनुष्य दोपहरी में घरो से बाहर नहीं निकलते।

'भीगा दिन' – सावन के मास, एवं पुरवाई हवा के चलने पर प्रेमियों की विचित्र ही स्थिति हो जाती है। प्रणय की सभी पूर्व–स्मृतियाँ रह–रहकर प्रेमिका के मन को चंचल करती है। माथुर जी के शब्दों में एक ऐसा बिम्ब देखिए –

"झील भरी फुहार–डूबी चलती पुरवाई
बिछुड़न की रातों की ठण्डी–ठण्डी करती
खोये–खोये लुटे हुए खाली कमरे में
गूँज रही पिछले रँगीन मिलन की यादें
नींद भरे आलिंगन में चूड़ी की खिलसन
मीठे अधरों की वे धीमी–धीमी बातें।"[8]

प्रणय सम्बंधी अनेक कोमल व मार्मिक अनुभूतियों का सफलतापूर्वक चित्रण माथुरजी के काव्य में उपलब्ध होता है।

'एसोसिएशन' – श्रवण बिम्ब का सम्बन्ध श्रवणेन्द्रिय से होता है। ऐसे बिम्बों में सूक्ष्म ध्वनियों व नाद–प्रभावों को शब्द–बध्द किया जाता है। संगीत का ज्ञान होने के कारण ध्वनियों की सूक्ष्मताओं को प्रस्तुत करने में माथुर जी अधिक सफल रहे हैं।

"सून–सून करते मैदानों में से होकर
मेल जायगी, निज लम्बी–लम्बी तेजी से
प्रतिदिन की ही भाँति आज भी।"[9]

हवा से भरे खुले मैदानों में से जब वेग से रेलगाड़ी गुज़रती है तो हवा के टकराव से उत्पन्न ध्वनी को "स" "न" व्यंजन एवं "ऊ" स्वर की आवृत्ति द्वारा कर्ण संवेद्य बनाकर उसका बिम्ब प्रस्तुत किया है।

'विजय दशमी' – कार्तिक मास की घाम का चित्रण करने के लिए कवि ने अनेक लघु बिम्बों की नियोजना द्वारा दीपों से जगमगाती धरती का पूर्ण बिम्ब चित्रित किया है –

"देश दिशाएँ, काल लोक–सीमा से आगे,
वह त्रिमूर्ति चलती जाती मन के फूलों पर,
अपने श्यामल गौर चरण से पावन करती,
वर्षों, सदियों, युगों–युगों के इतिहासों को।"[10]

यहाँ पर चलती जाती एवं पावन करती क्रियाओं से ही नेत्रों के समक्ष जाते हुए व्यक्ति की मूर्ति प्रस्तुत हो जाती है। इसके अतिरिक्त श्यामल और गौर रंग तो व्यक्ति विशेष को ही नेत्रों के समक्ष प्रस्तुत कर देते हैं। जाती हुई त्रिमूर्ति में अब श्यामल चरण राम के प्रतीक एवं गौर चरण लक्ष्मण के प्रतीक होने के कारण उनके चलने का क्रम भी प्रत्यक्ष हो जाता है।

'अधूरा गीत' – प्रयोगवादी काव्यधारा या नयी कविता में हमें शैलीगत नवीनता के भी दर्शन होते हैं और उपमानों की नवीनता रूपक विधान एवं आलंकारिकता के संबंध में इन प्रयोगवादी कवियों ने नितान्त अलौकिक नवीनता को खोजना चाहा है। इस प्रकार माथुर जी की कविता में भी सर्वथा नवीन उपमानों का प्रयोग हुआ है।

"अब आये बसन्त
कितने सहस्र वर्षों की गमी बना आया,
बेहिस, अपाक
ये शिशिर सरीखी बादल भरी हवा चलती
रोमाँ की यादें टूट रहीं
ये मुझे उड़ाती ले जातीं वर्षों पीछे,
जाड़ों की संध्या का वह अंतिम प्रहर,
रात, संदली चाँदनी से धीरे रचती जाती
जब कालीदास की नगरी में
उन गीतों की छाया में मैं भी बैठा था,
पहिले भी–अंतिम बार वही
जग मे जिसको मिटने पर ही है पहिचाना
वह चित्र न मुझ पर से उतरा,
उसको ही पूरा करने में
मुझको भी पूर्ण न होने का वरदान मिला
मैं चलता जाऊँगा इतिहासों से उपर

ISSN 2231-5063
Volume-3, Issue-1, July-2013

यद्यपि पाषाण हुआ जाता।"[11]

'बुध्द' –

"रनिवासों की नंगी बाँहों–सी रंगीनी
वह रेशमी मिठास मिलन के प्रथम दिनों की –
फीकी पड़ती गई अचानक।"[12]

कवि ने अपने प्रेम–मिलन के प्रारम्भिक दिनों की सुखदता को रेशम् के स्पर्श से व्यक्त किया है। रेशम में स्पर्श की कोमलता एवं स्निग्धता होती है। इस प्रकार कवि ने रेशम की स्पार्शिक अनुभूति द्वारा अपने रोमानी दिनों के सुख स्पर्श को अभिव्यक्त किया है।

पुनश्च – 'तार सप्तक' के द्वितीय संस्करण के अवसर पर 'पुनश्च' के रूप में माथुरजी ने एक लंबा वक्तव्य देते हुए नयी कविता की उपलब्धियों को रेखांकित करने का प्रयास किया है।

'नया कवि' – शीर्षक कविता में कवि ने अपने पूर्ववर्ती छायावादी कवियों को बूढ़ी रूढ़ियों और धुनी अनुभूतियों का कवि बताते हुए यह भाव व्यक्त किया है कि वे नयी आवाज की गर्जन हैं, अतः

"क्या करूँ
उपलब्धि की जो सहज तीखी आँच मुझमें
क्या करूँ
जो शंभु धनु टूटा तुम्हारा
तोड़ने को मैं विवश हूँ।"[13]

'देह की दूरियाँ' – कविता में ऐसे भाव हैं जिससे माथुरजी के व्यक्तित्व के बिखराव को उद्घाटित करते हैं– निम्नांकित पंक्तियों में यह भाव देखिए –

"निर्जन दूरियों के
ठोस दर्पण में चलते हुए
सहसा मेरी एक देह
तीन देह हो गयी
उगकर एक बिन्दु पर
तीन अजनबी साथ चलने लगे
अलग दिशाओं में
और यह न ज्ञात हुआ
इनमें कौन मेरा है।"[14]

'बरकुल' – चिलका झील – शीर्षक कविता शिल्प की दृष्टि से मुक्तिबोध की कविताओं से साम्य रखती है। इसका आरंभ फैंटेसीपरक वातावरण की सृष्टि करते हुए किया गया हैं –

"भीतर तमाशे बन्द बक्से का बायस्कोप
ठक्कनदार शीशों के मोखे सहसा खुल गये
धीरे–धीरे घूमते खिलौनों से दृश्य सभी
छोटे होते गये
मैं जिसका दर्शक भी हूँ
और तमाशा भी।"[15]

'दो पाटों की दुनिया' – कवि माथुर की कविताएँ आधुनिक भावबोध की कविताएँ हैं। इस कथन की पुष्टि हेतु 'दो पाटो की दुनिया' एक महत्वपूर्ण प्रश्न वे उठाते है –

"हर आदमी में देवता है
और देवता बड़ा बोदा है
हर आदमी में जन्तु है
जो पिशाच से न थोड़ा है
हर देवतापन हमको नपुंसक बनाता है
हर पैशाचित पशुत्व
नये जानवर बढ़ाता है
हम क्या करें
देवता और राक्षसं के क्रम से कैसे छूटें।"[16]

कवि ने इस आधुनिक युग में सत्य को भी एक अपराध माना है और वह इस जगत को बौनों की दुनिया कहता है।

'असिध्द की व्यथा' – शीर्षक कविता की मूल संवेदना परम्परागत संस्कारों और अभिनव तर्क बुध्दि में से किसी एक के चयन की समस्या को उभारना हैं।

"दो–दो दरवाजे हैं
अलग–अलग क्षीतिजों में
कब तक मैं दोनों की देहरियाँ लाँघा करू
ओ असिध्द, एक साथ।"[17]

'पृथ्वी–कल्प' – कवि माथुर ने विज्ञान के नये उपकरणों को काव्य–सामग्री के रूप में प्रस्तुत कर नयी परंपरा का सूत्रपात किया है, क्योंकि वे वैज्ञानिक सभ्यता के विकास को मानव की शक्ति एवं साहस का प्रतीक मानते हैं। वैज्ञानिक आविष्कारों को वे प्रकृति पर मानव की विजय का प्रतीक मानते है। "पृथ्वी–कल्प" कवि के मन में पृथ्वी पर जीवन और उसकी सार्थकता से संबंधित परिकल्पना का उद्भव है। "पृथ्वी–कल्प" अंतरिक्ष युगीन काव्य है, जिसमें पृथ्वी पर मानवीय जीवन के अर्थ को सृष्टि की विराट निरन्तरीयता के संदर्भ में देखने की कोशिश कवि ने की है –

"पृथ्वी !
फैला आयामहीन, नामहीन, दिंक् कराल
काल की अनावृत्त अलकान्त का अभंग जाल
तेज, सूक्ष्म, नेतिकाय, सृष्टि परिधि, निराकार
बहती है वह अदृश्य अपजल में निराधार पृथ्वी !
कोटि अग्नि बुद्बुद से नीला, पीत, रक्त सूर्य
शब्दहीन बजते उदयास्तों के काल–तूर्य
विश्व हैं चँदोवे, नित खुलता दिक् बहें भार
लोक–भूमियाँ अनन्त, जीवन के अलख द्वार
पृथ्वी – पृथ्वी – पृथ्वी।"[18]

'गीतिका' – शीर्षक कविता में कवि ने कटु राजनीतिक यथार्थ को उभारा हैं –

"शुध्द हो रही है समाज की मूर्ति पुरानी
गरम रक्त का स्नान कराकर
संस्कारों का परिष्कार है किया जा रहा।
कर राष्ट्रीयकरण विचारों के सेक्टर का
काम सोचने का भी हैंले लिया है राज्य ने।"[19]

'छाया मत छूना' – कवि स्वप्निल कुहासे से निकलकर यथार्थ की कठोर धरती पर जीवन का अनुभव करता है। वह स्मृति–बिम्ब प्रकट करते हुए कहता है –

"छाया मत छूना
मन, होगा दुख दूना।
जीवन में हैं सुरंग सुधियाँ सुहावनी
छवियों की चित्र–गन्ध फैली मनभावनी ;
तन–सुगन्ध रोष रही, बीत गयी यामिनी,
कुन्तल के फूलों की याद बनी चाँदनी,
भूली–सी एक छुअन बनता हर जीवित क्षण –
छाया मत छुना
मन, होगा दुख दूना।"[20]

मेरे मन, तुम अतीत मधुर–स्मृतियों की छाया तक को भी अब छूना नहीं– क्योंकि स्मृतियों को पुनः पुनः अनुभव करते रहने से मन की वेदना दूनी ही होगी, कम नहीं होगी, कवि को यथार्थ की कटुता का दुःखद अनुभव होता है– ऐसे में मधुर अतीत–जीवी स्मृतियाँ उसे और भी वेदना–विगलित करने लगती हैं। इसीलिए कवि अतीत की याद कर वर्तमान की वेदना को और नहीं बढ़ाना चाहता । पूरी अभिव्यक्ति प्रांजल है और कोमल भावोद्रेक है।

'निर्वासन' – शीर्षक कविता में कवि ने अपने आप को, अपने मन को चकरी–सा नाच रहा कहा हैं –

"यहाँ, यहाँ, यहाँ –

ISSN 2231-5063
Volume-3, Issue-1, July-2013

औचक फुलझड़ियाँ।
चकरी–सा नाच रहा मन,
या वातावरण ?
ओ निर्वासन, कहाँ हूँ मैं, कहाँ हूँ ?"[21]

निष्कर्ष :–

छायावादोत्तर–काल के कवियों में गिरिजाकुमार माथुरजी का महत्वपूर्ण स्थान हैं। किंतु आलोचकों ने अज्ञेय और मुक्तिबोध की भाँति–शीर्षस्थ स्थान नहीं दिया फिर भी उनके उपरांत माथुरजी का काव्य ध्यान आकृष्ट करता हैं। आंशिक रूप से उनकी कविताओं पर अज्ञेय का प्रभाव दृष्टिगोचर होता हैं। मुक्तिबोध की भाँति उनकी कविताओं में समाजिक यर्थाथ का चित्रण मिलता हैं। माथुरजी की काव्य कला के समर्थ आलोचक डॉ. नगेन्द्र बड़े प्रशंसक हैं उनके मतानुसार –

"गिरिजाकुमार माथुर नये कवियों में अग्रणी है। इसका प्रतिवाद नहीं किया जा सकता– नयी कविता में जो स्थायी काव्य तत्व हैं उसका वे प्रतिनिधित्व करते हैं, इसमें भी संदेह नहीं किया जा सकता। ऐतिहासिक और साहित्यिक दोनों दृष्टियों से उनका स्थान अज्ञेय के समकक्ष है। अज्ञेय की प्रतिभा गुरुतर है, इसलिए उनकी कला में अधिक गरिमा और प्रौढ़ता हैं, किन्तु उनका कथ्य इतना व्यक्तिलिप्त है कि प्रायः अनैतिक और असामाजिक हो जाता है। गिरिजाकुमार में स्नेह अर्थात् आत्मदान की प्रवृत्ति कहीं अधिक हैं– व्यक्ति–लिप्सा की वह क्रूरता उनमें नहीं हैं; इसलिए उनके अहं में अधिक मार्दव है और उसी अनुपात में सहज प्रगीत तत्व भी अधिक हैं। . . . शिल्प की दृष्टि से गिरिजाकुमार का पलड़ा और भी भारी है – अज्ञेय। अज्ञेय की अपेक्षा इन्हें अर्थ–सौंदर्य की पहचान अधिक है और नाद सौंदर्य की दृष्टि से तो तुलना का प्रश्न ही नहीं उठता। . . . कालान्तर में, प्रचार का कोलाहल शान्त होने पर नयी–कविता का इतिहास जब वस्तुपरक दृष्टि से लिखा जाएगा तो उसके निर्माताओं में गिरिजाकुमार का स्थान अन्यतम रहेगा।"

माथुर की छायावादोत्तर काल के प्रमुख कवियों में से एक श्रेष्ठ कवि हैं। हरेक कवि की अपनी पहचान होती हैं।

'तार सप्तक' में श्री माथुर जी की बाईस कविताएँ संकलित हैं। कविताओं के संबंध में वक्तव्य देते हुए कवि ने स्वयं कहा है कि – "कविता में विषय में अधिक टेकनीक पर ध्यान दिया है। विषय की मौलिकता का पक्षपाती होते हुए भी मेरा विश्वास है कि टेक्नीक के अभाव में कविता अधूरी रह जाती हैं। इसी कारण चित्र को अधिक स्पष्ट करने के लिए मैं वातावरण के रंग उसमें भरता रहा हूँ। कहीं–कहीं केवल वातावरण के चित्रण से ही विषय इंगित किया हैं। जैसे 'कुतुब के खण्डहर' अथवा 'रुक कर जाती हुई रात' नामक कविताओं में केवल वहाँ का वातावरण चित्रित किया है। प्रत्येक कविता में प्रथम उसकी आधार–भूमि निर्माण करना आवश्यक समझता हूँ, जैसे 'रेडियम की छाया,' 'क्वाँर की दोपहरी' अथवा 'विजय–दशमी' नामक कविताओं के प्रथम बन्द हैं। वातावरण चित्रण के 'डिटेल' में मैंने रंगों का आधार विशेष रूप से रखा है, किंतु मैं चित्र को सदा हलके रंगों की छाँहों के आवरण में लिपटा पसन्द करता हूँ। क्योंकि यथार्थ चित्र के सभी डिटेल में कला की दूरी से देखता रहा हूँ। मेरा यह विश्वास है कि अत्यधिक गहरे रंगों का प्रयोग कला में प्राचीनता (मेडीवलट्रेट) का द्योतक हैं।"[21]

श्री गिरिजाकुमार माथुरजी ने कविता के अलावा एकांकी नाटक, आलोचना आदि के क्षेत्रों में लेखन कार्य किया है, लेकिन उनकी ख्याति हिन्दी–जगत में काव्य–कृतियां द्वारा ही हैं।

संदर्भ सूची :–

1)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'आज है केसर रंग रंगे वन' – पृ. क्र. 147
2)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'रुककर जाती हुयी रात'– पृ. क्र. 148
3)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'चूड़ी का टुकड़ा' – पृ. क्र. 148
4)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'रेडियम की छाया' – पृ. क्र. 149
5)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'कुतुब के खण्डहर' – पृ. क्र. 150
6)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'पानी भरे हुए बादल' – पृ. क्र. 151
7)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'क्वाँर की दुपहरी' – पृ. क्र. 151
8)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'भिगा दिन' – पृ. क्र. 152
9)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'एसोसिएशन' – पृ. क्र. 153
10)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'विजय दशमी' – पृ. क्र. 155
11)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'अधूरा गीत' – पृ. क्र. 156
12)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'बुध्द' – पृ. क्र. 159
13)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'नया कवि' – पृ. क्र. 170
14)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'देह की दूरियाँ' – पृ. क्र. 170
15)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'बरकुल : चिलका झील' – पृ. क्र. 170
16)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'दो पाटों की दुनिया' – पृ. क्र. 171
17)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'असिध्द की व्यथा' – पृ. क्र. 173
18)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'पृथ्वी कल्प' – पृ. क्र. 175
19)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'गीतिका' – पृ. क्र. 182
20)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'छाया मत छूना' – पृ. क्र. 183
21)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'निर्वासन' – पृ. क्र. 184
22)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – 'इतिहास' – पृ. क्र. 178
23)'तार सप्तक' – गिरिजाकुमार माथुर – – पृ. क्र. 144

नीता सिंग
हिन्दी विभागाध्यक्ष श्री बिंझाणी नगर महाविद्यालय, उमरेड रोड, नागपुर